वार्षिकी

(२०२४-२०२५)

ANNUAL REPORT

(2024 - 2025)

दिल्ली-संस्कृत-अकादमी

(दिल्ली सरकार)

वार्षिकी

(वर्ष २०२४-२०२५)

सम्पादक

शैलेन्द्र कुमार सिंह

सचिव

सहायक सम्पादक

प्रद्युम्न चन्द्र

दिल्ली-संस्कृत-अकादमी

(राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली सरकार)

प्लाट सं.-५, झण्डेवालान, करोलबाग, नई दिल्ली-११०००५

website:- www.sanskritacademy.delhi.gov.in

E-mail:-delhisanskritacademy@gmail.com

प्रकाशक-

सचिव,

दिल्ली-संस्कृत-अकादमी

(राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली सरकार)

© दिल्ली-संस्कृत-अकादमी

प्राप्तिस्थान-

विक्रय-विभाग

दिल्ली संस्कृत अकादमी

(राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली सरकार)

प्लाट सं0 5, झण्डेवालान, करोलबाग, नई दिल्ली-110005

दूरभाष : 011-20920363

प्रकाशन विभाग की ई-मेल- sanskritpatrika.dsa@gmail.com

विषय सूची

क्र.सं.		पृष्ठ सं.
1.	संस्कृत भाषा का महत्त्व	1
2.	संस्कृतभाषा की उपादेयता	2
3.	दिल्ली संस्कृत अकादमी की स्थापना	6
4.	दिल्ली संस्कृत अकादमी के उद्देश्य	7
5.	दिल्ली संस्कृत अकादमी के सार्वकालिक कार्यक्रम एवं गतिविधियाँ	8
6.	अकादमी द्वारा आयोजित कार्यक्रमों की सूची एवं विवरण (2024-2025)	19
7.	चित्रावली	30
8.	अकादमी सम्पूर्ण प्रकाशनों का विवरण	35
9.	विक्रय हेतु उपलब्ध प्रकाशनों की सूची	43
10.	सी.ए. ऑडिट रिर्पोट	47

संस्कृत भाषा का महत्त्व

विश्व की अनेक प्राचीन सभ्यताएँ कालकवलित हो गयीं, किन्तु भारतीय संस्कृति आज भी विश्व के प्रांगण में अपना सम्मानपूर्ण तथा गौरवमय स्थान बनाए हुए है, इसका एक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि भारतीय संस्कृति के उद्‌भव एवं विकास को संस्कृत-भाषा का स्वर प्राप्त हुआ है। प्राचीन काल से ही विभिन्न संस्कृतियों, मान्यताओं, धार्मिक विश्वासों, बौद्धिक पूर्वाग्रहों की अभिव्यक्ति संस्कृत के माध्यम से हुई है। इसलिए बार-बार उद्‌घोष किया जाता रहा है-**'भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा।** '' संस्कृत भाषा का साहित्यिक तथा प्राच्यविद्यापरक इतिहास मात्र एकवर्गीय चेतना की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि इसमें मानव-सभ्यता के स्वस्थ मूल्यों की बहु-आयामी दिशाएँ मुखरित हुई हैं, जो भारत को 'जगद्‌गुरु' बनाने का गौरव प्रदान करती हैं। राष्ट्रीय एकता को एक सूत्र में पिरोने तथा भारत की सामाजिक संस्कृति को इन्द्रधनुषी रंग से अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली एक दायित्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह संस्कृत-भाषा और उसका साहित्य प्राचीन काल से करता आया है। संस्कृत भारतवर्ष की राष्ट्रीय अखण्डता और 'अनेकता में एकता' का सन्देश सदियों से देती आयी है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक तथा गुजरात से लेकर नागालैण्ड तक भारत में तीन सौ से भी अधिक भाषाएँ या बोलियाँ बोली जाती हैं। संस्कृत इन सभी भाषाओं और बोलियों की माँ है और उन्हें एकता के सूत्र में बाँधती है। संस्कृत की राष्ट्रीय चेतना के परिणाम स्वरूप ही भारतवर्ष एक समृद्ध सांस्कृतिक राष्ट्र के रूप में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना पाया है।

प्रत्येक सामुदायिक वर्ग और धार्मिक मतानुयायियों को राष्ट्रीय पटल पर आने की जब भी महत्त्वाकांक्षा हुई तो उन्हें संस्कृत के सहारे की आवश्यकता पड़ी। संस्कृत के पाश्चात्य विद्वान् 'मोनियर विलियम्स' की धारणा रही है कि **'यद्यपि भारतवर्ष में अनेक भाषाएं विद्यमान हैं, परन्तु भारतीयता के समर्थक सभी व्यक्तियों ने जाति, कुल मर्यादा तथा सम्प्रदाय से ऊपर उठकर सर्वसम्मति से संस्कृत और उनके साहित्य को महान आदर दिया। 'सर्वधर्म समभाव' एवं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावधारा से इसने विश्वबन्धुत्व के कल्पवृक्ष को सींचा है। इसकी विभिन्न शाखाओं पर नाना संस्कृतियों के स्वर गुञ्जायमान हैं।'** संस्कृत मानव-सभ्यता के प्राचीनतम इतिहास से जुड़ी विश्व की

प्रथम भाषा है, जो प्राचीन होने के साथ-साथ आधुनिक भाषा के रूप में भी सर्वथा समर्थ है। चाहे विदेशी भाषाओं की बात हो या फिर आधुनिक भारतीय भाषाओं की, संस्कृत का सभी से घनिष्ठ सम्बन्ध देखा जा सकता है। भाषायी एकता की प्रेरणास्रोत होने के कारण संस्कृत को सभी भाषाओं की जननी कहा जाता है। संस्कृत की शुद्धता, पवित्रता, विलक्षणता और सार्वभौमिकता के कारण आचार्य दण्डी द्वारा इसे देववाणी के रूप में सम्मानित किया गया। उन्होंने काव्यादर्श में लिखा है **''संस्कृतं नाम दैवीवाक् अन्वाख्याता महर्षिभिः।''** वैदिक काल से संस्कृत भाषा भारतवर्ष की राष्ट्रीय भाषा होने के कारण 'भारत भारती' के रूप में व्यवहृत होती थी। वैदिक ऋषियों ने संस्कृत-भाषा के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ लोकभाषाओं के अभ्युदय की कामना भी की है। भारतवर्ष के संविधान में अपनाये गए **'सर्वभाषा उन्नति'** के सिद्धान्त का मूल स्वर ऋग्वेद में मिलता है- **''आ भारती भारतीभिः सजोषा'' (ऋग्वेद ७.२.८)।** वस्तुतः समस्त मानव-सभ्यता संस्कृत भाषा पर केन्द्रीभूत है, कहा भी गया है- **'संस्कृतिः संस्कृताश्रिता।'**

वर्तमान में संस्कृत भाषा की उपादेयता

संस्कृत भाषा ने देश की सभी विचार परंपराओं और सांस्कृतिक विरासतों का प्रतिनिधित्व किया है। चाहे वेदवादी रहे हों या वेदविरोधी, आस्तिक हों या नास्तिक, जैन हों या बौद्ध, शैव हों या वैष्णव, अध्यात्मवादी हों या लोकायत्तिक, मुस्लिम हों या यूरोपियन सभी ने संस्कृत-साहित्य के महासमुद्र में अपनी वाग्धारा अर्थ का अर्घ्य समर्पित किया है तथा ऐतिहासिक साक्ष्य के रूप में यह गवाही भी दी है कि संस्कृत ने राष्ट्रीय स्तर पर पारस्परिक भ्रातृत्व संवाद के लिये मार्ग प्रशस्त किया है तथा सम्प्रदायवाद एवं प्रान्तवाद से ऊपर उठकर राष्ट्रीय प्रज्ञा के संग्रहण और संवर्धन के स्वर्णिम अवसर जुटाए हैं। ये ही कारण हैं कि धर्मवादी और अर्थवादी, जड़वादी तथा चेतनावादी सभी विचार-परम्पराओं के ऐतिहासिक तट संस्कृत-साहित्य में निर्मित हुए हैं। किन्तु आज हम किन्हीं राजनीतिक और आर्थिक संकीर्णताओं से अभिशप्त होकर पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान की ओर लालायित हैं तथा संस्कृत-साहित्य के अध्ययन की ओर हमने उपेक्षा की दृष्टि अपना ली है।

ज्ञान-विज्ञान के सवंर्धन का चाहे राष्ट्रीय सन्दर्भ हो या फिर अन्तर्राष्ट्रीय, संस्कृत विद्या के अक्षर भण्डार का अपलाप नहीं किया जा सकता है। भारतीय तत्त्व-चिन्तकों ने ही सर्वप्रथम सत्यानुसन्धान की वैज्ञानिक प्रक्रिया का आविष्कार करते हुए यह उद्घाटित किया है कि **''हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्''** (ईशोपनिषद् 18) अर्थात् भौतिकवादी चमक-दमक से सत्य को ढाँप दिया जाता है। इसलिए सत्यानुसन्धान के शोधार्थी के लिए यह आवश्यक है कि वह **'वादे वादे जायते तत्त्वबोधः'** की मार्ग-सरणी का पथिक बनकर आधुनिक मानव के लिए तुलनात्मक ज्ञान-विज्ञान का द्वार

खोले, परन्तु इस मार्ग में उसे सर्वप्रथम प्राचीन भारतीय वाङ्मय के रम्य तपोवनों से गुजरना होगा और उसके बाद ही वह आधुनिक विश्वविद्यालयीय ज्ञान-विज्ञान का वास्तविक मूल्यांकन कर सकता है। आधुनिक मानव के लिए संस्कृत विद्या की अनिवार्यता इसलिए भी रेखांकित हो जाती है, ताकि वह आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के मूल स्रोतों को पकड़ सके और यह जान सके कि आधुनिक ज्ञान-विज्ञान कितना प्रगतिशील है। विदेशों में इस अमूल्य ज्ञान-सम्पदा का व्यापक स्तर पर दोहन-कार्य पिछली तीन सदियों में निरन्तर प्रगति पर है, किन्तु भारतवर्ष में इस दिशा में गम्भीरता से सोचना प्रारम्भ नहीं हुआ। जिसके फलस्वरूप सम्बन्धित विचारकों द्वारा भारतीय विद्या और उसके प्राचीन ज्ञान-विज्ञान को या तो साम्प्रदायिकता का नाम देकर हतोत्साहित कर दिया जाता है या फिर उसे एक निम्नस्तरीय ज्ञान-विज्ञान मानकर अवमानित किया जाता है इस मानसिकता का एक मुख्य कारण है राष्ट्रीय अस्मिता के प्रति उदासीनता तथा पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान को उत्कृष्ट मानने का पूर्वाग्रह। ब्रिटेन, रूस, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों में संस्कृत-विद्या के अध्ययन को जो प्रोत्साहन दिया जा रहा है उसका मुख्य कारण यह है कि वहाँ के बुद्धिजीवियों ने संस्कृत की प्रासंगिकता को आधुनिक सन्दर्भ में भी चरितार्थ किया है। उदाहरण के लिए अमेरिका के वैज्ञानिकों ने **ब्लूमफील्ड** की इस मान्यता को सत्य सिद्ध किया है कि **'पाणिनि की अष्टाध्यायी की सहायता से अमेरिकन वैज्ञानिक कम्प्यूटर प्रणाली का आविष्कार करने में सफल हुए हैं।'** सोवियत विद्वान् **गोरबोवस्की** महाभारत में ब्रह्मास्त्र-प्रयोग के अवतरणों से प्राचीन भारत में 'एटमबम' के अस्तित्व होने की सम्भावनाओं का पता लगा रहे हैं। संस्कृत-विद्याओं के वैज्ञानिक महत्त्व के कारण इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि में वैदिक गणित को शिक्षा के पाठ्यक्रम का अंग ही बना दिया गया है। लन्दन में 10+2 प्रणाली के अन्तर्गत गणित के आधुनिक फार्मूलों को समझने के लिए प्राचीन भारतीय गणित शास्त्र को एक उपयोगी प्रणाली के रूप में मान्यता मिल चुकी है। संस्कृत अध्ययन से जुड़ी इन अन्तर्राष्ट्रीय उपलब्धियों से यह भली-भाँति सिद्ध हो जाता है कि आज भारत में संस्कृत को महत्त्व देना कितना आवश्यक है।

18वीं शताब्दी आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के ध्रुवीकरण की एक महत्त्वपूर्ण शताब्दी रही है इसी शताब्दी में 'सर विलियम जोन्स- v' ने 'संस्कृत की खोज' (डिस्कवरी ऑफ संस्कृत) के साथ प्राच्य विद्या अनुसंधान की आधारशिला रखी। 'संस्कृत की खोज' से पाश्चात्य विद्वान् एक 'भारोपीय भाषा परिवार' की नवीन अवधारणा का भी आविष्कार करने में सफल हुए, जिसका अर्थ है विश्व की सभी भाषाओं में संस्कृत-भाषा का अवेस्ता, ग्रीक, लैटिन आदि भाषाओं के साथ तुलनात्मक अध्ययन। भाषा

साथ तुलनात्मक अध्ययन। भाषा वैज्ञानिक-विषय प्रकाश में आए तो दूसरी ओर तुलनात्मक धर्म विज्ञान के माध्यम से 'विश्व संस्कृति' के इतिहास को जानने के लिए संस्कृत-भाषा की महत्ता उभर कर आयी। यूरोपीय सभ्यताएँ वैदिक आर्यों के साथ अपने सांस्कृतिक सम्बन्धों को जोड़ने की होड़ में लग गयीं। नि:सन्देह संस्कृत के कारण **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की आधुनिक व्याख्या सम्भव है तथा भारत को अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान भी प्राप्त होता है।

सत्य तो यह है कि वैदिक काल से संस्कृत भाषा भारतवर्ष की राष्ट्रीय भाषा होने के कारण 'भारत भारती' के रूप में व्यवहृत होती थी। वैदिक ऋषियों ने संस्कृत-भाषा के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ लोक-भाषाओं के अभ्युदय की कामना भी की है और भारतवर्ष के संविधान में अपनाये गये **'सर्वभाषा उन्नति'** के सिद्धान्त को स्वर प्रदान करते हुए कहा- **'आ भारती भारतीभिः सजोषा'** (ऋग्वेद 7.2.8)।

पिछली अनेक अन्धकार युगीन शताब्दियों में जब भारत अपनी राजनीति कमजोरियों के कारण राज्यों में विभक्त हो गया था, उस समय भी संस्कृत को 'कार्य-व्यवहार' और 'राजभाषा' का दर्जा प्राप्त था। वास्तविकता तो यही है कि भले ही हम अपने क्षुद्र राजनीतिक स्वार्थों के कारण 'प्रान्तवाद' और 'क्षेत्रीयवाद' के गणित को अपनाते आए हैं, परन्तु जब भी जन-जीवन के 'राष्ट्रीय-चेतना' और 'अखण्ड भारत' की भावना आई है, उसका उदाहरण संस्कृत-भाषा और संस्कृत-साहित्य ही रहा है।

सामान्यतया यह भ्रान्त धारणा प्रचलित है कि मुस्लमान शासकों के राज्यकाल में संस्कृत भाषा और साहित्य हतोत्साहित हुआ। प्रसिद्ध इतिहासकार श्री रमेशचन्द्र मजूमदार ने इस मिथ्या धारणा का खण्डन करते हुए कहा कि 'मुसलमान शासक संस्कृत-प्रेमी थे और उनके शासन काल में संस्कृत को प्रश्रय तथा प्रोत्साहन मिला।' क्षेमेन्द्रकृत 'लोकप्रकाश' नामक ग्रन्थ में वर्णित है कि मुस्लिम शासन के प्रारम्भ होने के बाद भी दीर्घकाल तक कश्मीर में संस्कृत राजकीय व्यवहार, न्यायालयों और शासकीय आदेशों की भाषा रही थी। इस ग्रन्थ में दैनिक शासन की लिखा-पढ़ी, प्रतिवेदन, प्रलेख आदि के जो नमूने दिये गए हैं, वे संस्कृतनिष्ठ ही हैं। **'लेखपद्धति'** नामक ग्रन्थ से यह भी ज्ञात होता है कि गुजरात के सुल्तान बहुत समय तक राजभाषा के रूप में संस्कृत का ही व्यवहार करते आये थे। कश्मीर के इतिहास में जैनुल आबदीन (1420-70 ई.) संस्कृत-साहित्य और भारतीय विद्याओं का अनन्य प्रेमी था। भारतवर्ष में अनेक ऐसी मुस्लिम कब्रें भी मिली हैं जिन पर शिलालेख संस्कृत भाषा में उत्कीर्ण हुए हैं। अब्दुल रहमान नामक प्रसिद्ध साहित्यकार संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश का मर्मज्ञ विद्वान था। अकबर के राज्यकाल में संस्कृत भाषा और उसके विद्वानों को विशेष समादर मिला था। अबुल फज़ल के भाई फौजी संस्कृत के बहुत अच्छे

विद्वान् थे। उन्होंने हिन्दी तथा संस्कृत की सम्मिश्रित भाषा में रहीम काव्य की रचना की तथा **'खेट कौतुकम्'** नामक एक ज्योतिष ग्रन्थ का भी निर्माण किया। शाहजहाँ के समय में भी संस्कृत को राजकीय सम्मान प्राप्त था, राजकुमार दाराशिकोह संस्कृत का पारंगत विद्वान् था, जिसकी प्रेरणा से उपनिषदों, भवगद्गीता, योगा-वाशिष्ठ आदि का फारसी में अनुवाद भी करवाया गया। मुस्लिम राजपरिवार की महिलाएँ भी संस्कृत-काव्य के प्रति मुग्ध थीं। शाहजहाँ की बेगम रूपराशि बंशीधर मिश्र की संस्कृत-रचनाओं से अत्यन्त प्रभावित थी। इन सभी तथ्यों से स्पष्ट है कि संस्कृत-भाषा की माधुरी और उसके तत्त्वावगाहन की प्रवृत्ति ने मुस्लिम शासन को भी मन्त्र-मुग्ध कर लिया था तथा मुस्लिम शासकों, साहित्यकारों तथा बुद्धिजीवियों ने इसके संवर्धन और विकास के लिए अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

इस प्रकार संस्कृत, भूत, भविष्य और वर्तमान भारत के लोकमानस की भव्य अभिव्यक्ति उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम का अखण्ड भारत प्रतिबिम्बित है; विभिन्न धार्मिक और वैचारिक के स्वर गुंजायमान हैं; राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक संस्कृत भाषा के साहित्यिक कलेवर में मानवी के उत्कृष्ट ज्ञान-विज्ञान की लहरें हिलोरे मार रही हैं।

आज भारतवर्ष में जो पाश्चात्य सभ्यता और विचारों का पोषण एवं पल्लवन किया है, उसका मूल भारतवर्ष के प्राचीन ऋषियों और तत्त्वचिन्तकों के ज्ञान-विज्ञान में निहित चाहे लोकतन्त्र की हो या धर्मनिरपेक्षता की, स्वतंत्रता के अर्थ को समझना हो या फिर शान्ति विश्व-बधुत्व के अभिप्राय को, संस्कृत-साहित्य के निर्मल कलेवर में इसका वास्तविक अर्थ दिया गया है। गणित शास्त्र, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, भूगोल, ज्योतिषशास्त्र, दर्शनशास्त्र, साहित्य, संगीत आदि ज्ञान की महनीय परम्पराएं भारतवर्ष की अमूल्य निधियाँ हैं और ये सभी निधियाँ संस्कृत के पिटारे में हैं। आज अंग्रेजी शिक्षा-व्यवस्था के परिणाम स्वरूप हम भारतीय विज्ञान से प्रतिदिन जो विमुख जा रहे हैं, उसके प्रचार-प्रसार की ओर हम फिर से लौटें। हमें नालन्दा और तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों की भाँति विश्वस्तर पर शिक्षा-जगत् को ऊँचा उठाना है। मानव की मौलिक समस्या के विषय में भारतीय तत्त्वज्ञानियों ने जो अपने अनुभवपरक वैज्ञानिक सत्यों का रहस्योद्घाटन किया है, विश्व के बुद्धिजीवियों तक उन्हें पहुँचाना है। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब राष्ट्रीय स्तर पर संस्कृत को प्रोत्साहन दिया जाए। राष्ट्रीय उन्नति के लिए सांस्कृतिक उन्नति आवश्यक है और संस्कृति का प्रसार संस्कृत से ही सम्भव है।

यथैव चन्द्रिका चन्द्रे राजते नित्यसङ्गता।
संसिक्ता संस्कृते तद्वद् भारतस्यास्ति संस्कृतिः॥

दिल्ली संस्कृत अकादमी की स्थापना

संस्कृत भाषा के महत्त्व को दृष्टि में रखते हुए तथा राष्ट्र की संस्कृति, सभ्यता, भाषा एवं साहित्य के संरक्षण और विकास के प्रति अपने दायित्व को समझते हुए देश व राज्य की सरकारें राष्ट्रीय अखण्डता व भाषायी एकता की प्रतीक संस्कृत भाषा के संरक्षण एवं प्रचार-प्रसार के लिए अधिकाधिक प्रयत्नशील हैं।

इसी उद्देश्य से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान व अन्य राज्यों में संस्कृत अकादमियाँ कार्य कर रहीं हैं। संघ राज्य दिल्ली में भी हिन्दी, उर्दू तथा पंजाबी अकादमियों की तरह वर्ष 1987 में दिल्ली संस्कृत अकादमी की स्थापना की गई थी। इस सम्बन्ध में दिल्ली के महामहिम उपराज्यपाल महोदय द्वारा दिनांक 30.3.1987 को अधिसूचना जारी की गई और इस अकादमी को सोसायटी पंजीकरण एक्ट 1860 के अन्तर्गत पंजीकरण संख्या एस-17783, दिनांक 17.5.1987 से पंजीकृत कराया गया।

अकादमी के लिए सहायता पद्धति भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के पत्र संख्या एफ. 5(17)88 यू.टी.आई. दिनांक 30.3.88 एवं 5.9.88 से अनुमोदित हुई।

स्थापना के अनन्तर 'दिल्ली संस्कृत अकादमी' संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए निरन्तर गतिशील है।

दिल्ली संस्कृत अकादमी के उद्देश्य

1. संस्कृत भाषा एवं उसके साहित्य के उत्थान, प्रचार-प्रसार हेतु वर्तमान एवं भविष्य के लिए अकादमी अनुदान प्राप्त करेगी। संस्कृत-पुस्तकों का प्रकाशन तथा ऐसी मूल कृतियों का प्रकाशन, जो अब तक प्रकाशित न हुए हों, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक संदर्भ-कोष, ज्ञान-कोष आदि कोष-ग्रन्थों की प्रारम्भिक शब्दावली, संस्कृत से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के ग्रन्थों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद करने के लिए प्रोत्साहन देने हेतु अकादमी अपने स्तर पर उक्त कार्यक्रमों की व्यवस्था करेगी।

2. अकादमी राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर संस्कृत-सम्मेलन, संगोष्ठी, परिसंवाद, नृत्य, नाटक, काव्य-गोष्ठी, संस्कृत से सम्बन्धित प्रदर्शनी, प्रतियोगिताएँ, संस्कृत से सम्बन्धित समस्याओं के सम्बन्ध में वाद-विवाद, गोष्ठी, विभिन्न भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन एवं संस्कृत से सम्बन्धित ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक यात्राओं आदि विभिन्न प्रकार से संस्कृत सम्बन्धी कार्यक्रमों की व्यवस्था करेगी। इस सम्बन्ध में भारत सरकार के द्वारा समय-समय पर संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार हेतु जारी किये गये आदेशों के कार्यान्वयन की व्यवस्था करेगी।

3. साहित्यकारों को उनकी अद्‌भुत साहित्यिक रचनाओं तथा संस्कृत के क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्यों के लिए मान्यता प्रदान करना एवं पुरस्कृत करना आदि अन्य आर्थिक सहयोग प्रदान करने की व्यवस्था करेगी। संस्कृत के कवियों, लेखकों की अप्रकाशित उपयोगी कृतियों की प्रकाशन-व्यवस्था करेगी।

4. संस्कृत के विद्वानों को उच्च शिक्षा एवं शोध के लिए प्रोत्साहन देगी।

5. दिल्ली के विभिन्न क्षेत्रों में संस्कृत-केन्द्रों की स्थापना करेगी तथा उन केन्द्रों के लिए पाठ्य-पुस्तकों को तैयार करेगी तथा केन्द्रों में अध्ययनरत छात्रों को प्रोत्साहन देगी।

6. संस्कृत-पाठशालाओं के उत्थान के लिए प्रोत्साहन देगी तथा आवश्यकता पड़ने पर उनके लिए पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकों, परीक्षाओं इत्यादि की व्यवस्था के लिए प्रोत्साहन देगी।